परमसंत डॉ. श्री कृष्ण लाल जी महाराज

{जन्म 15 अक्टूबर, 1894 महानिर्वाण 18 मई, 1970}

परमसंत डॉ. श्री कृष्ण लाल जी महाराज एक ऐसी महान आत्मा थी जो अपने पूज्य गुरूदेव, परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज के मिशन को पूरा करने के उद्देश्य से सचखड से अवतरित हुई थी।

संत मत के महान आचार्य डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज का जन्म 15 अक्टूबर, 1894, को सिकन्दराबाद (जिला बुलंदशहर-उ. प्रदेश) के एक प्रतिष्ठित भटनागर कायस्थ कुल में हुआ। आपके पूज्य पिताजी का नाम श्री भगवत दयाल तथा माताश्री का नाम श्रीमती कृष्णा देवी था। आपके पितामह पूज्य श्री बृषभानजी परमं संत श्री सालिगराय साहब (दयाल बाग) आगरा से तथा पूज्य माता श्रीमती कृष्णा देवी परम संत सावंत सिंह साहब (व्यास गद्दी) से दीक्षित थे।

बचपन से ही आपको भगवान कृष्ण की भक्ति बहुत प्रिय थी तथा लगभग 8 वर्ष की आयु से ही आप उनकी याद में अकेले बैठकर रोया करते थे तथा वहुधा स्वप्न में आपको भगवान कृष्ण के दर्शन हुआ करते थे। धार्मिक प्रवृति आपको अपने वंश मे अपने पूज्य पितामह, पिताजी तथ माताजी से मिली।

आपने आगरा से एम.बी.बी.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण कर कुछ समय शासकीय सेवा की तदुपरान्त नौकरी छोड़कर सिकन्दराबाद में ही प्राइव्हेट प्रक्टिस की। सन् 1953 के आसपास आपने प्रेक्टिस छोड़कर अपना सम्पूर्ण समय 'रामाश्रम सतसंग' के माध्यम से आध्यात्मिक शिक्षा के कार्य में लगा दिया।

पूज्य डॉक्टर साहब की रूहानी तालीम बचपन से ही प्रारम्भ हो गयी थी! सन् 1914 में आपने परमसंत सतगुरू महात्मा रामचन्द्र जी महाराज की शरण ग्रहण की। सन् 1915 में आपके गुरूदेव ने आपको दीक्षा दी तथा आध्यात्मिक शिक्षा का काम सुपुर्द कर दिया तथा उसी समय जितने खानदानों अथवा आध्यात्मिक परम्पराओं से इजाजतें उन्हें प्राप्त थी, सब आपको अता फरमाई! सन् 1921 में आपको आचार्य पदवी तथा 1931 में लिखित इजाजत ताम्मा (सर्वोच्च और सम्पूर्ण इजाजत) देकर हुक्म दिया कि 'मेरा काम करो और मेरे मिशन को भटकों और जरूरतमंदों तक पहुँचाओ, अगर तुमने कोताही (आलस्य) की तो आकवत (परलोक) में दामनगीर होऊँगा! आपको गुरूदेव ने बुलाकर आदेश दिया कि ''मुझे जो कुछ देना था सब कुछ तुम्हें दे चुका, मेहनत करो सब कुछ तुम पर खुल जाएगा!, सदा अपने भाइयों की शिक्षा का ध्यान रखना। अगर मेरे काम को फैलाया तो तुम्हें दीन और दुनिया सब कुछ दूँगा।''

तभी से पूज्य डॉक्टर साहब अपने गुरूदेव की आज्ञा का निरंतर पालन करते हुए, उन्हीं के चरण चिन्हों पर चलकर, उनका दिव्य संदेश भूले भटकों और परमार्थ के जिज्ञासुओं तक पहुँचाते रहे।

आपने अपने गुरूदेव के जीवन-काल में अपना कोई शिष्य नहीं बनाया तथा हमेशा गुरूप्रेम और गुरूसेवा में ही लगे रहें। 14 अगस्त, 1931 को पूज्य महात्मा जी अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर असल भण्डार में लीन हो गये। उनके निर्वाण के पश्चात ही आपने अपने गुरूदेव का काम प्रारंभ किया तथा उसमें अपने जीवन के अंत समय तक लगे रहे।

आपने सन् 1933 में अपने जन्म स्थान सिकन्दराबाद में अपने आराध्य गुरूदेव की सेवा में वार्षिक भण्डारे की स्थापना की तथा सन् 1954 से मासिक पत्रिका 'राम-संदेश' का प्रकाशन प्रारंभ किया। आपने 'जीवन चरित्र' तथा अमृत रस्' पुस्तकों की रचना की तथा आपके प्रवचनों के अनेक संकलन रामाश्रम सत्संग द्वारा प्रकाशित किए गए हैं जो आध्यात्म के गूढ़ तत्वों पर प्रकाश डालते हैं। 1958 में आपकी भेंट परमसंत डॉ0 बैनर्जी साहब से गोरखपुर में हुई।

आप जीवन पर्यंत अपने पूज्य गुरूदेव के मिशन को आगे बढ़ाने तथा रामश्रम सत्संग के माध्यम से आध्यात्मिक विद्या के प्रचार प्रसार, दीन-दुखियों की सेवा तथा परोपकार में लीन रहे।

18 मई 1970 (जो 12 रविउल अब्बल जो मोहम्मद साहब का जन्म दिन है तथा 12 बफात का दिन था) की प्रातःकाल में सिकन्दराबाद में सत्संग के कमरे में ही आपने अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर उस अखण्ड ज्योति को सदा-सदा के लिए उसके अमर भण्डार में लीन कर दिया।

पूज्य डॉ. साहब का कथन था कि दुनिया को भोगो मगर ईश्वर को चाहो! वह मानते थे कि जो आदमी दुनिया नहीं बना सका वह परमार्थ क्या बनाएगा। संसार में रहकर संसार के सारे कार्य करते हुए भी संसार में लिप्त नहीं हो। आपके अनुसार, सच्चा प्रेम वहीं है जिसकी वजह न मालूम हो और जिसके बिना रहा भी न जा सके। इसे निःस्वार्थ प्रेम, निश्चछल, प्रेम या वेगरजाना मुहब्बत कहते हैं। जब सिवाय ईश्वर की चाह के सब चाहें दूर हो जाती है, तभी निःस्वार्थ प्रेम आता है। जब ऐसा प्रेम गुरू और ईश्वर से होगा तभी आनन्द की प्राप्ती हो सकती है। आप सदाचार से रहने तथा हक और हलाल की कमाई पर जोर देते थे।

आपने आजीवन ग्रहस्थ धर्म का पालन करते हुये, ख्याति से दूर रहकर और अपने आपको हमेशा सेवक कहकर संसार के दीन-दुखियों का उद्धार किया। आप अपने आपको हमेशा इतना पोशीदा रखते थे कि निकटतम प्रेमियों को भी यह मालूम नही हो पाता था कि मिट्टी की देह में साक्षात भगवान बैठे हैं।

आप ज्ञान मार्ग तथा भक्ति मार्ग दोनों को साथ-साथ लेकर चलते थे। आपके अनुसार मन ही बंधन का असल कारण है। जो साधन इस बंधन को ढीला करे वही असली साधन है, अन्यथा व्यर्थ समय

नष्ट करना है। जो साधन मन और आत्मा की इस गाँठ को खोलने में मदद करे वही असली साधन, धर्म या मजहब है। जो गुरू इस गाँठ को खालने में मदद करे वही असली गुरू है।

आध्यात्मिक शिक्षा का तरीका

महात्मा श्री कृष्ण लाल जी महाराज की आध्यात्मिक शिक्षा को हम दो भागों में बाँट सकते हैं:-

1. चक्रबंधन या चक्रवेधन, तथा 2. प्रेम

चक्रवन्धन विद्या आदि काल से चली आ रही है। आचार्य दिगंत पूज्य महात्मा रामचन्द्र जी महाराज ने यह विद्या एक महान सूफी संत, हजरत मौलाना फज्ल अहमद खाँ साहब से प्राप्त की थी। समय और परिस्थितियों के अनुसार उसमें कुछ सरलता का पुट दिया गया जिससे वह जनसाधारण तक पहुँच सके।

महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी ने यह विद्या यदा-कदा कुछ ही सेवकों को दी। उनका कथन था कि इस जमाने में लोगों को फुरसत कम है, स्वास्थ्य भी पहले जैसा नहीं है और इखलाती हालत (आचरण) भी कमजोर है, अतः उन्होनें प्रेम मार्ग को अपनाया।

चक्र बन्धन

मनुष्य की देह में नीचे गुदास्थान (मूलाधार चक्र) से लेकर ऊपर सिरे की चोटी (ब्रह्म रन्ध्र) तक 21 चक्र होते हैं। छः चक्र गुदा से लेकर माथे तक है, (नीचे से क्रमशः गुदा चक्र, इन्द्री चक्र, नाभि चक्र, हृदय चक्र, कंठ चक्र तथा आज्ञा चक्र) इसके ऊपर छः चक्र दिमाग में (हतमल उंजजमत) होते हैं। (सहस्त्र-दल, कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भवर गुफा तथा सचखंड) इसके ऊपर के ये चक्र Bright matter में होते हैं। (अलख, अगम तथा अनामी तथा 3 गुप्त चक्र)। जो चक्र ग्रे मेटर में है उनका संबंध ब्रह्माण्ड से है। वहाँ भी छः लोक है जिनका जगना इनसे संबंध रखता है।

अधिकतर संतो ने 18 चक्रों का हाल लिखा है किन्तु गुरूदेव ने 21 चक्रों का होना बताया है। तीन चक्र जो गुप्त हैं, वर्णन में आ नहीं सकते। किसी एक चक्र पर ठहर जाना संतों का लक्ष्य नही होता। इसलिए वे बराबर ऊपर उठते जाते हैं जब तक सब चक्रों को पार करके दयाल देश में नहीं पहुँच जाते। दयाल देश संतों का देशहै। सत्यलोक असली बैठक उस परमात्मा की है जो तमाम ज्ञान और आनंद का भण्डार है।

'पिण्डे सो ब्रह्माण्डे'- परमात्मा ने मनुष्य को अपने रूप पर बनाया है और उसे अपना अंश दिया है। इसलिए परमात्मा अंशी और मनुष्य अंश कहलाया। जो गुण परमात्मा में है वे ही

गुण अंश रूप में मनुष्य में है। मनुष्य शरीर (जो दिखाई देता है) तीन शरीरों की मिलौनी हैः 1. स्थूल 2. सूक्ष्म और 3. कारण! परमात्मा के भी तीन रूप हैः (1) विराट (2) हिरण्यगर्भ तथा (3) अव्यक्त।

जैसे मनुष्य चोले में आज्ञा चक्र पर आत्मा की बैठक है, नर देह में उसकी चैतन्य धाराऐं या किरणें फैली हुई है और जैसे नरदेह में आत्मा का स्थान है असली ज्ञान अमर जीवन और सच्चे आनन्द का स्थान है, इसी तरह सतलोक में असली बैठक उस परमपिता परमेश्वर (मालिक कुल) की है जो तमाम ज्ञान और आनन्द का भण्डार है।

सच्चा सुख प्राप्त करने के लिए प्रत्येक जिज्ञासु को आवश्यक है कि वह अपनी आत्मा के अपने स्थूल शरीर यानी बारह पर्दों (छः चक्र स्थूल शरीर के और छः चक्र सूक्ष्म शरीर के) से हटाकर ऊपर की ओर चढ़ाई कर और निर्वाण देश के छटे चक्र पर जो कि असली भण्डार आत्मा का है, पहुँचावे तभी सच्चा सुख मिल सकता है और आवागमन के चक्र से छूट सकता है। यह चक्र अठाहरवाँ स्थान है।

उपर्युक्त लक्ष्य की प्राप्ति जिस विद्या से हो सकती है, उसे हिन्दुओं में राज-योग या चक्र वंधन तथा सूफियों में नक्शबन्दी कहते हैं। इस अभ्यास का तरीका किसी वक्त के पूरे संत सतगुरू से ही सीखा जा सकता है। जो स्वयं रास्ता चला चुका है, वही रास्ता बता सकता है। और मतों में मूलाधार से प्रारंभ कर प्राणायाम एवं हठ योग की क्रियाओं के माध्यम से नाभिचक्र, हृदय चक्र, कण्ठ चक्र और, ऊपर के चक्रों तक ले जाते हैं।

संतों का तरीका इससे न्यारा है। इनके यहाँ नीचे की तीन चक्रों (गुदा, इन्द्रिय तथा नाभि) को छोड़ दिया जाता है। अभ्यास ज्यादातर हृदय चक्र या आज्ञा चक्र से शुरू कराया जाता है, इन चक्रों के साधने से नीचे के तीन चक्र अपने आप जागृत हो जाते हैं। गुरू के बताए अभ्यास करने से ऊपर की चढ़ाई करके (जो गुरूकृपा और गुरू की मदद के बिना नहीं होती) संत पुरूष के धाम और उसके बाद संतों के धाम यानी दयाल देश तक पहुँच जाता है जहाँ से लौटकर फिर आवागमन के चक्र में नहीं पड़ता।

दूसरा अभ्यास है-सतसंग, जो नीचे से ऊपर की ओर किया जाता है। इसमें गुरू या सत्संग कराने वाला अपने ख्याल को परमात्मा के चरणों में लगाता है और वहाँ से ईश्वर की कृपा (फैज, अमृत या ग्रेस) अपनाकर सत्संगियों पर अपनी इच्छा शक्ति से फैलाता है। इस तरह ऊपर से कृपा की धार को लेकर नीचे मिलाता है जिसमें अभ्यासी यह ख्याल करता है कि प्रकाश या आत्मा की धार ऊपर से आ रही है और हमारी चोटी के स्थान (Medulla oblongata) पर उतरती हुई सारे शरीर में प्रवाहित हो रही है। इस धार में वह चार चीजों का अभ्यास करता है, ज्ञान, प्रेम, प्रकाश और आनंद इसी से जीवन है।